रहिमन-शतक

एडवाँस परीक्षा के परीक्षार्थियों के
लाभार्थ

लेखक—

ला० भगवानदीन

पहली बार १००० | दशहरा सं० १९८३ | मूल्य ।)

श्रीः

(सटीक)

रहिमन-शतक

ऐडवांस परीक्षा के विद्यार्थियों के लिये

टीकाकार

लाला भगवानदीन

प्रथम बार
१०००

मूल्य
।)

विक्रेता
साहित्य-भूषण-कार्यालय,
बनारस सिटी।

मुद्रक
बजरंगबली गुप्त "विशारद"
श्री सीताराम प्रेस,
बिसेसरगंज, बनारस सिटी।

भूमिका

हिन्दी-पद्य-साहित्य में 'दोहा' एक बहुत ही चुटीला छंद है। हिन्दी-संसार में कबीर, तुलसी, रहीम, बिहारी और रस-निधि ये पाँचो कवि 'दोहा' कहने में बहुत प्रसिद्ध हैं। कबीर ज्ञान छाँटते हैं, तुलसी भक्ति का उपदेश देते हैं, रहीम सांसारिक अनुभव सिखाते हैं तथा बिहारी और रसनिधि शृंगार रस की वर्षा करते हैं। थोड़े शब्दों में बहुत बड़ा मज़मून अदा करना ही 'दोहा' छंद की विशेषता है। यह गुण रहीम में बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है।

(परिचय)

इनका पूरा नाम अब्दुलरहीम खाँ था। ये अकबरशाह के अभिभावक बैरामखाँ खानखानाँ के पुत्र थे। खानखानाँ इनका भी खिताब था। अरबी, फारसी और संस्कृत के अच्छे विद्वान थे। चित्त के उदार और दानी थे, विद्वानों की खूब क़द्र करते थे। एक बार इन्होंने एक कवि को एक ही छंद सुनाने पर ३६ लाख का दान दिया था। अब के हृदयहीन लोग चाहे इसे फजूल खर्ची कहें, पर सहृदयों की रीझ बूझ कुछ और ही होती है।

ये केवल कवि और विद्वान ही न थे, वरन अच्छे योद्धा भी थे। इनकी विद्यासंबन्धी योग्यता देख कर अकबर ने इन्हें अपने दरबार के नवरत्नों में रखा था और रणकुशलता पर रीझकर प्रधान सेनापति बनाया था। अतः प्रमाणित है कि रहीम जी कलम और तलवार दोनों के शूर थे।

पर समय सदा एकसा नहीं रहता। अकबरशाह के देहान्त

के बाद थोड़े ही दिनों में इन पर जहाँगीरशाह का क्रोध हुआ, इनकी जागीर ज़ब्त कर ली गई और जेल की भी हवा खानी पड़ी। जेल से छूटने पर इन्हें संसार से बिराग उत्पन्न हुआ और ये दिल्ली छोड़कर इधर उधर घूमते रहे। कुछ दिन चित्रकूट में रहे। कहते हैं कि वहीं इनसे तुलसीदास से भेंट हुई थी।

रहीम जी सच्चे गुण के सच्चे क़द्रदान थे। कहते हैं कि ये अकबर के दरबार में अकबर के सामने ही महाराणा प्रतापसिंहजी की बीरता की प्रशंसा कर बैठते थे। अकबर उनकी हरकत से नाराज़ न होता था। सूर और तुलसी की कविता का रहीम पर इतना प्रभाव पड़ा था कि वे कृष्ण और राम के उपासक से बन गये थे।

(भाषा)

रहीम की भाषा शुद्ध, सरल, सुसंगठित और मधुर है। दोहा छंद की छटा (थोड़े में बहुत कहना) पूर्ण मात्रा में है। प्रसाद गुण इतना है कि बहुत दोहों की टीका करने की हमें जरूरत ही नहीं जँची, अतः 'सरल है' लिखकर छोड़ दिया है।

(रहीम के ग्रंथ)

कहते हैं कि रहीमकृत एक 'सतसई' है पर हमने देखी नहीं। संभव है कि ये दोहे उसी में के हों। 'बरवै नायिका भेद' बरवै छंद में लिखा एक ग्रंथ इनका हमारे पास है। इस छंद में भी रहीम ने कमाल दिखलाया है। बरवै छंद दोहा से भी छोटा छंद है, और अवधी भाषा में यह छंद बहुत ही सुन्दर गठित होता है। बरवै छंद के ओस्ताद तो तुलसीदास हैं, पर रहीम जी ने भी इस छंद को नफासत से कहा है।

(हमारी करतूत)

कई एक प्रचलित परीक्षाओं में रहीम की कविता पढ़ाई जाती है। रहिमन बिलास, रहिमन शतक, रहिमन प्रकाश इत्यादि कई एक ग्रंथ प्रचलित हैं, पर इनके प्रकाशकों ने पाठशुद्धि की ओर कम ध्यान दिया है, अतः इस संग्रह में हमने यह विचार रखा है कि वे ही दोहे लिये हैं जो सब को बिना संकोच पढ़ाये जा सकें (अधिक शृंगारी दोहे हमने जानबूझ कर छोड़ दिये हैं) और दोहों को अक्षरक्रमानुसार करके लगा दिया है। प्रचलित भाषा में टीका लिख दी है, और अलंकार भी यथाबुद्धि दरसा दिये हैं। कहीं कहीं कुछ कठिन शब्दों की व्युत्पत्ति भी लिख दी है । भूल चूक के लिये विद्वानों से क्षमाप्रार्थी हैं। भूल दरसाई जाने पर सुधार करने को सदा तैयार रहेंगे।

भगवानदीन ।

(निवेदन)

आजकल हमारा चित्त टीकाकारी में लगा है। साहित्य-सेवियों से निवेदन है कि वे बतलावें कि इस समय किन किन साहित्यिक ग्रंथों की टीकाओं की ज़रूरत है।

कवि 'सेनापति' जी के 'कबित्त रत्नाकर' ग्रंथ की हमें जरूरत है। जिस रसिक के पास यह ग्रंथ हो वे उसकी प्रतिलिपि देने की कृपा करें, तो हम उसकी भी टीका लिख डालें। प्रतिलिपि कराने में जो खर्च पड़ैगा वह हम उनकी सेवा में भेज देंगे।

विनीत

भगवानदीन

* श्रीगणेशायनमः *

रहिमन-शतक

दोहा—अनुचित उचित रहीम लघु करहिं बड़ेन के जोर।
ज्यों ससि के संयोग तें पचवत आगि चकोर॥१॥

शब्दार्थ—लघु—छोटे लोग। बड़े—बड़ेलोग। जोर—बल, भरोसा। ससि—(शशि) चन्द्रमा। संयोग—मेल, मित्रता।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि छोटे लोग बड़े लोगों के बल पर अनुचित वा उचित कार्य कर डालते हैं। जैसे चन्द्रमा का मित्र होने के कारण चकोर आग को भी पचा डालता है—(चन्द्रमा हिमकर' कहलाता है। उसके संयोग से चकोर में भी इतनी शक्ति आजाती है कि वह आग को खाता और पचा डालता है)।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—अब रहीम मुसकिल परी गाढ़े दोऊ काम।
साँचे से तो जग नहीं झूठे मिलैं न राम॥२॥

शब्दार्थ—गाढ़े—कठिन। सांचे से—सत्यता के व्यवहार से। झूठे—असत्य व्यवहार से।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि अब (इस युग में) कठिन्नता आ पड़ी है। दोनो काम बड़े कठिन हैं, (अर्थात् दो में से कोई

ऐसा नहीं जो उपेक्षणीय हो) सत्य के व्यवहार से तो लौकिक सुख सम्पति नहीं मिलती, और असत्य के व्यवहार से ईश्वर नहीं मिलता (तो ऐसी दशा में मनुष्य को क्या करना चाहिये यही कठिनाई है)

अलंकार—प्रमाण ।

दोहा—अमरबेलि बिन मूल की प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभुहिं तजि खोजत फिरिये काहि ॥३॥

शब्दार्थ—अमर बेलि=आकाशबौर । वह पीली और डोरे के आकार की बेलि जो बहुधा वृक्षों पर फैली रहती है । इसमें पत्तियाँ और जड़ नहीं होती । मूल=जड़ । प्रभु=मालिक ।

भावार्थ—देखो आकाशबौर जो बिना जड़ की होती है, उसे भी जो मालिक पालता है, (रहिमन कवि कहते हैं कि) ऐसे मालिक को छोड़ कर किसको खोजते फिरें—जो ईश्वर ऐसी बेजड़ बस्तु की परवरिश करता है उसी का भजन करो विश्वास रखो कि वही तुम को भी रोजी देगा ।

दोहा—अमृत ऐसे बचन में रहिमन रिस की गाँस ।
जैसे मिसिरिहु में मिली निरस बाँस की फाँस ॥४॥

शब्दार्थ—अमृत—बहुत मीठे । गाँस—गुत्थी [गाँसी] । फाँस—फट्टी, तिल्ली ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि (होशियार रहना) कभी कभी बहुत मीठे बचनों में भी क्रोध की गाँसी रहती है, जैसे मिसिरी के कुज्जे में रसहीन बाँस की फट्टियाँ (तीलियाँ) अवश्य होती हैं (किसी के अति मधुर बचनों में आकर धोखा न खा जाना, जो मधुर बचन बोलता है वह बहुधा कोई मतलब गाँठना चाहता है) ।

अलंकार—उदाहरण ।

दोहा—आप न काहू काम के छाँह पात फल फूल ।
औरन को रोकत फिरत रहिमन पेड़ बबूल ॥५॥

(विशेष)—पौधों वा खेतों की रक्षा के लिये कांटेदार बबूल के झंखाड़ों की बारी लगाई जाती है जिससे पशु उसे खा नहीं सकते। इसी पर रहीम कहते हैं कि बहुत से लोग बबूल के पेड़ की तरह होते हैं, अर्थात् आप स्वयं अपने छाया पत्ते, फल और फूलों सहित किसी के काम के योग्य नहीं होते (किसी के काम नहीं आते और दूसरों (जो किसी के काम आ सकते हैं) को भी रोकते फिरते हैं, जिससे वे भी किसी के काम न आवें ।

भावार्थ—हे बबूल के पेड़ ! तुम स्वयं अपने छाया, पत्तों, फलों और फूलों सहित किसी के काम के नहीं हो, और दूसरों को भी रोकते फिरते हो ।

अलंकार—अन्योक्ति ।

दोहा—ओछो, काम बड़ो करै तो न बड़ाई होय ।
ज्यौं रहीम हनुमन्त को गिरधर कहै न कोय ॥६॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि कोई छोटा आदमी बड़ा काम भी करे तो भी उसकी बड़ाई नहीं होती, जैसे हनुमान जी को कोई भी 'गिरधर नहीं कहता ।

(विशेष)—श्रीकृष्णजी ने एक बार गोवर्धन उठाया । इस लिये दुनियाँ उनको 'गिरधर' कहती है । पर हनुमान जी ने अनेक बार अनेक पहाड़ उठाये, मगर कोई भी उन्हें 'गिरधर' नहीं कहता—कारण ? हनुमानजी कृष्ण से छोटे माने गये हैं ।

अलंकार—उदाहरण ।

दोहा—कमला थिर न रहीम यह साँच कहत सब कोय।
पुरुषपुरातन की बधू क्यों न चंचला होय ॥७॥

शब्दार्थ—कमला—लक्ष्मी। थिर=स्थायी। पुरुषपुरातन=(१) ईश्वर (२) बुड्ढा मनुष्य। बधू=नवयुवती स्त्री। चंचला=अधीर स्वभाव वाली।

विशेष—इस उक्ति में बुढ़ापे में विवाह करनेवालों को अच्छी गंभीर और मर्मस्पर्शी चुटकी ली गई है।

भावार्थ—यह बात लोग बहुत सत्य कहते हैं कि लक्ष्मी स्थिर नहीं रहती। बुड्ढे की नवयुबती स्त्री भला कैसे अधीर न हो।
अलंकार—श्लेष से पुष्ट अर्थान्तर न्यास।

दोहा—कमला थिर न रहीम कह लखत अधम जे कोइ।
प्रभु की सो अपनी कहै क्यों न फज़ीहति होय ॥८॥

शब्दार्थ—कमला=लक्ष्मी। अधम=नीच। फजीहत=अप्रतिष्ठा।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि लक्ष्मी स्थिर नहीं है [सदा किसी के पास नहीं रहती] वे लोग अति नीच हैं जो उसे स्थिर देखते हैं [चाहते हैं कि हमारे पास सदा बनी रहै]। मालिक की स्त्री को अपनी स्त्री कहते हैं तो उनकी अप्रतिष्ठा क्यों न हो—अर्थात् होनी ही चाहिये।

अलंकार—काकुबक्रोक्ति।

दोहा—करत निपुनई गुन बिना रहिमन निपुन हजूर।
मानो टेरत पेड़ चढ़ि यहि प्रकार हम कूर ॥९॥

शब्दार्थ—निपुनई=निपुणता, दक्षता। निपुण हजूर=दक्ष-पुरुष के सामने। पेड़ चढ़कर टेरना=अच्छी तरह प्रख्यात करना, डौंड़ी पीटना। कूर=निपट बेकाम, खराब।

भावार्थ—रहिमन कहते हैं कि जो गुणहीन पुरुष सर्व-गुणदत्त पुरुष के सामने अपनी निपुणता दिखलाने की चेष्टा करता है, वह मानो इस बात को भली भाँति प्रख्यात करता है कि मैं ऐसा बुरा हूँ ।

अलंकार—उत्प्रेक्षा ।

दोहा—कह रहीम इक दीप तें प्रगट सबै दुति होय।
तनु सनेह कैसे दुरै दृग दीपक जरु दोय ॥१०॥

शब्दार्थ—दुति=प्रकाश । सनेह=(स+नेह) नेह सहित, प्रेमयुक्त (प्रेमी) ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि एक दीपक के प्रकाश से सब वस्तुएँ प्रकट दिखायी देती हैं, तब प्रेमयुक्त शरीर (प्रेमी का शरीर) कैसे छिप सकता है जहाँ दो नेत्ररूपी दीपक जलते हों—(प्रेमी का प्रेम नेत्रों से प्रकट हो जाता है) जैसे जलते हुए दीपक से यह प्रकट हो जाता है कि इसमें [सनेह] तेल है ,वैसे ही प्रेमी के नेत्रों से प्रकट हो जाता हैं कि इसमें [स्नेह] प्रेम है ।

अलंकार—रूपक ।

दोहा—कह रहीम धन बढ़ि घटे जात धनिन की बात ।
घटै बढ़ै उनको कहा घास बेंचि जे खात ॥११॥

शब्दार्थ—बात=साख ।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि पहले बढ़कर पुनः धन के घटने से धनीजनों की साख जाती रहती है [पहले की तरह उनकी बात का विश्वास नहीं रहता], परन्तु जो जन नित्य-प्रति की मजूरी पर ही निर्वाह करते हैं—अति निर्धन हैं—उनका क्या घट बढ़ सकता है ? दो चार पैसे अधिक ही मिले तो क्या और कम ही मिले तो क्या ?

दोहा—कह रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहु रीत ।
बिपति कसौटी जे कसे तेई साँचे मीत ॥१२॥

शब्दार्थ—संपति=संपति और समृद्धि के समय में। सगे= अपने, संबन्धी। कसे=जाँचे गये और जाँच में पूरे उतरे हुए।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि संपत्ति और समृद्धि के समय में तो बहुत लोग बहुत प्रकार से अपने बनते हैं (अपना सम्बन्ध जताकर लाभ उठाते हैं), पर वास्तव में सच्चे मित्र (हितैषी) वे ही लोग हैं जो विपत्ति की कसौटी में कसे जाने पर ठीक उतरते हैं—विपत्ति के समय भी काम आते हैं।

अलंकार—रूपक।

दोहा—कह रहीम कैसे निभै केर बेर को संग ।
ये रस डोलत आपने उनके फाटत अंग ॥१३॥

शब्दार्थ—केर=केला वृत्त। बेर=बेर का वृत्त। ये=(बेर का वृत्त)। रस डोलत आपने=अपने आनन्द में आकर हिलता है। उनके=(केला वृत्त के) अंग=पत्ते।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि केला और बेर का संग कैसे निभ सकता है (दो विरुद्ध स्वभाववालों का साथ नहीं निभ सकता)। जब बेर का वृत्त (हवा पाकर) आनन्द से हिलता है, तब केले के पत्ते उसके काँटों से फटते हैं (एक का स्वाभाविक कार्य दूसरे को दुःखप्रद होता है, ऐसे जनों का संग नहीं निभता) इस दोहे का मजमून कबीर के दोहे नं० ३८३ से मिलता जुलता है।

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—काकी महिमा नहिं घटी पर घर गये रहीम ।
धाय समानी उदधि में गंग नाम भयो धीम ॥१४॥

शब्दार्थ—काकी=किसकी । महिमा=बड़ाई । धीम=नास्ति, नष्ट ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि पराये घर जाने से (पराये घर जाकर उस से मिलकर रहने से) किसकी बड़ाई नहीं घट जाती—अर्थात् सब की बड़ाई नष्ट हो जाती है। देखो जब गंगा जाकर समुद्र में समा जाती है तब उसका नाम ही नष्ट हो जाता है, समुद्र में गिरे हुए गंगाजल को फिर कोई गंगाजल नहीं कहता, न वह पीने ही योग्य रहता है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दोहा—कागद को सो पूतरा सहजहिं में घुलि जाय ।
रहिमन यह अचरज लखो सोऊ खैंचत बाय ॥१५॥

शब्दार्थ—घुल जाना=नष्ट हो जाना । बाय=बायु,स्वाँस । बाय खैंचत=अहंकार करता है ।

भावार्थ—(नश्वर शरीर पर) रहीम कहते हैं कि यह शरीर कागद के पुतले के समान है, जो सहज ही में घुल जाता है । यह आश्चर्य तो देखो कि यह ऐसा नश्वर शरीर भी अहंकार करता है (कि मैं यह कर सकता हूँ, मैं वह कर सकता हूँ, मैंने यह किया, मैंने वह किया इत्यादि)।

अलंकार—उपमेय लुप्तोपमा ।

दोहा—काम कछू आवै नहीं मोल न कोऊ लेइ ।
बाजू टूटे बाज को साहेब चारा देइ ॥१६॥

शब्दार्थ—बाजू=पंख । साहेब=मालिक, या पालक । चारा= भोजन, रोजी ।

भावार्थ—बहुत सरल है ।

अलंकार—अन्योक्ति ।

नोट—यह 'दोहा' कहावत हो गया है।

दोहा—को रहीम पर द्वार पै जात न जिय सकुचात।
संपति के सब जात हैं बिपति सबै लै जात ॥१७॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि याचना करने के लिये पराये द्वार पर जाते कौन नहीं संकुचित होता, परन्तु किया क्या जाय, विपत्ति पड़ने पर विवश होकर ऐसा करना ही पड़ता है और संपत्तिवान ही के द्वार पर सब जाते हैं—अतः संपत्तिवानों को चाहिये कि उनका अनादर न करें। यदि उनके पास लक्ष्मी न होतीं तो कोई न आता।

दोहा—खीरा को मुहँ काटि कै मलियत लोन लगाय।
रहिमन करुये मुखन की चहियत यही सजाय॥१८॥

भावार्थ—खीरे का मुख काटकर और उसमें नमक लगा कर मुंह मलकर उसका कडुआ पन दूर किया जाता है। रहीम कहते हैं कि कडुये मुखवालों की (कटुवादियों की) यही सज़ा ठीक भी है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—गगन चढ़ै फरक्यो फिरै रहिमन बहरी बाज।
फेरि आय बन्धन परै पेट अधम के काज ॥१९॥

शब्दार्थ—बहरी बाज=छोटी जाति का बाज़ पक्षी।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि बहरी बाज़ इतने ऊँचे उड़ सकता है कि मानो आकाश तक चढ़ सकता है, और शिकार के बाद जब पालनेवाला उसे पुनः पकड़ना चाहता है तब फड़क फड़ककर दूर जा जा बैठता है। परन्तु नीच पेट के कारण पुनः आकर कैद में पड़ जाता है। तात्पर्य यह कि

बहुत ऊँची योग्यता वाले भी पेट के कारण बंधन स्वीकार करते हैं।

अलंकार अन्योक्ति अथवा हेतु।

दोहा—गति रहीम बड़ नरन की ज्यौं तुरंग व्यवहार।
दाग दिवावत आपुतन सही होत असवार ॥२०॥

भावार्थ—गति=प्रकृति, स्वभाव। तुरंग=घोड़ा। सही होना=नौकरी में बहाल होना।

(विशेष)—मुगलों के समय में फौजी दस्तूर था कि जब कोई सवार नौकर रखा जाता था तब उसका घोड़ा पुट्ठे पर दाग दिया जाता था। घोड़े का दागा जाना ही उसकी नियुक्ति का चिन्ह था। इसी पर रहीम को यह उक्ति सूझी।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े लोगों की प्रकृति ठीक घोड़े के व्यवहार के समान है, कि अपने शरीर पर दाग दिलवाता है (जलने का कष्ट सहता है) और नौकरी पर बहाल होता है उसका असवार (अर्थात बड़े लोग दूसरों के लिये खुद कष्ट सहते हैं)।

अलंकार—प्रतिबस्तूपमा।

दोहा—गहि सरनागति राम की भवसागर की नाव।
रहिमन जगत उधार कर और न कछू उपाव ॥२१॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि रामजी की शरण गहो जो संसार रूपी समुद्र के लिये नाव है, क्योंकि जगत से उद्धार पाने के लिये और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

अलंकार—निदर्शना।

दोहा—गुन ते लेत रहीम जन सलिल कूप ते काढ़ि।
कूपहु ते कहुँ होत है मन काहू को बाढ़ि ॥२२॥

शब्दार्थ—गुन=(१) रस्सी (२) गुण। जन=मनुष्य। सलिल=पानी (रस)

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि गुन (रस्सी) से तो लोग गहरे कुएँ से पानी निकाल लेते हैं। क्या किसी मनुष्य का मन कुवाँ से भी अधिक गहरा होता है? कि गुणद्वारा उसके मन की बात—उसकी मंशा—न निकाली जा सके।

अलंकार—श्लेष से पुष्ट वक्रोक्ति)

दोहा—गुरुता फबै रहीम कहि फबि आई है जाहि।
उर पर कुच नीके लगैं अनत बतौरी आहि ॥२३॥

शब्दार्थ—गुरुता=बड़प्पन। फबना=अच्छी लगना। अनत=अन्यत्र, और जगह। बतौरी=बढ़ा हुआ मांस पिंड। आहि=है।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़प्पन सब जगह नहीं छजता, जहां अच्छा लगता आया है वहीं अच्छा लगता है। कुचों का उभाड़ छाती पर अच्छा लगता है (क्योंकि सदा से ही ऐसा नियम चला आया है) और जगह पर तो ऐसा मांस पिंड बतौड़ी ही है, आदर योग्य नहीं।

अलंकार—अर्थान्तरन्यस।

दोहा—छोटेन सों निबहैं बड़े कहि रहीम यह लेख।
सहसन को है बाँधियत लै दमरी की मेख ॥२४॥

शब्दार्थ—यहि लेख=इस लेख से, इस तरह से। सहसन को=हजारों के मोल का। हय=घोड़ा। मेख=खूंटा।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़ों का निर्वाह छोटों के द्वारा इस प्रकार से होता है कि हज़ारों के मोल का घोड़ा एक दमड़ी की मेख लेकर ही बाँधा जाता है।

अलंकार—अर्थान्तर न्यास।

दोहा—जाल परे जल जात बहि तजि मीनन को मोह।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छांड़ति छोह ॥२५॥

शब्दार्थ—मीन=मछली। मोह=प्रेम। नीर=पानी। छोह=प्रेम।

भावार्थ—जाल में फँस जाने पर यद्यपि जल मछलियों का प्रेम छोड़कर जाल के छेदों द्वारा निकल जाता है (बिपदावस्था में प्रेमी को छोड़कर भाग जाता है, जो न करना चाहिये) रहीम कहते हैं कि, तौ भी मछली पानी का प्रेम नहीं छोड़ती।

अलंकार—विशेषोक्ति।

दोहा—जे गरीब सों हित करैं धनि रहीम वे लोग।
कहा सुदामा बापुरो कृष्ण मिताई जोग ॥२६॥

शब्दार्थ—गरीब=निर्धन। हित=प्रेम। धनि=धन्य। कहा=क्या। बापुरो=विचारा। मिताई=मित्रता। जोग=जोग्य।

भावार्थ—अत्यन्त सरल है।

अलंकार—बक्रोक्ति से पुष्ट अर्थान्तरन्यास।

दोहा—जेहि रहीम तन मन दियो कियो हिये बिच भौन।
तासों दुख सुख कहन की रही कथा अब कौन ॥२७॥

शब्दार्थ—भौन=(भवन) घर। कथा=बात। रही=छिपी हुई है।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि जिस प्यारे को अपना तन और मन अर्पण कर दिया और जिसने हृदय ही में अपना घर बना लिया है, उस प्यारे से अब दुख सुख की कौन सी बात छिपी हुई है (जो कही जाय अर्थात् वह स्वयं जानता है कहने की ज़रूरत नहीं, जो कुछ उसे उचित जँचेगा वह स्वयं करेगा।)

दोहा—जैसी परै सो सहि रहै कहि रहीम यह देह।
धरती ही पर परत है सीत, घाम औ मेह ॥२८॥

शब्दार्थ—सहि रहै=सह लेती है। सीत=सरदी। घाम=धूप, गरमी। मेह=वर्षा।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि इस शरीर का ऐसा स्वभाव है कि जैसा समय (दुःख वा सुख का) आ पड़ता है' वैसा यह शरीर सह लेता है (क्योंकि यह मिट्टी का बना हुआ है) सरदी, गरमी वर्षा धरती ही पर तो पड़ती है अर्थात् यह शरीर मिट्टी का पुतला है और मिट्टी (धरती) सब कुछ सहती है, वही गुण शरीर में भी है—यह भी सब कुछ सह लेता है।

अलंकार—सम।

दोहा—जो रहीम रहिबो चहौ कहौ वही को दाउ।
जो नृप बासर निसि कहै तो कचपची दिखाउ॥२९॥

शब्दार्थ—कहौ वही को दाउ=ऐसी बात कहो जिसमें उसी की जीत रहे, उसी की सी कहो, उसकी हाँ में हाँ मिलाओ। कचपची=कृत्तिका नक्षत्र।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यदि तुम किसी राजा के पास रहना चाहते हो और उसके कृपापात्र होना चाहते हो, तो उसी की सी बात कहा करो। अगर वह दिन को रात कहे तो तुम कह दिया करो कि हाँ महाराज, यह देखिये कृतिका नक्षत्र के घने तारे कैसे चमक रहे हैं।

(सूचना)—कृतिका नक्षत्र में बहुत से सघन तारे हैं जिससे उसका आकार अँगूर के गुच्छे के समान देख पड़ता है। देहाती लोग इसे कचपचिया कहते हैं।

(विशेष)—यह दोहा प्रसिद्ध फारसी कवि शेखसादी के एक शेर का अनुवाद मात्र है, जो इस प्रकार है:—

(शेर)—अगर शह रोज़ रा गोयद शबस्तीं।
बिबायद गुफ्त ईनक माहो परवीं॥

दोहा—जो पुरुषारथ ते कहूँ संपति मिलत रहीम।
पेट लागि बैराट घर तपत रसोई भीम?॥३०॥

शब्दार्थ—पुरुषारथ=पराक्रम या बल। संपति=दौलत। पेट लागि=पेट पालने के वास्ते। बैराट=राजा विराट (जिनके यहाँ अज्ञातबास के समय पांडव लोग कुछ दिन रहे थे। उस समय भीमसेन रसोइये का काम करते रहे। रसोई तपना=भोजन बनाना।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यदि कोशिश और पराक्रम से कहीं दौलत मिलती होती तो क्या पेट पालने के लिये राजा विराट के यहाँ रहते समय भीमसेन रसोइये का काम करते (अर्थात् न करते)।

अलंकार—काकुवक्रोक्ति से पुष्ट अर्थान्तरन्यास।

दोहा—जो बड़ेन को लघु कहो नहिं रहीम घटि जाहिं।
गिरिधर मुरलीधर कहे कछु दुख मानत नाहिं॥३१॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यदि बड़े लोगों को तुम छोटा भी कहो तो उनकी बड़ाई कुछ घट नहीं जायेगी, देखो श्रीकृष्णजी 'गिरधर' होकर भी केवल 'मुरलीधर' कहने से कुछ दुःख नहीं मानते (बुरा नहीं मानते कि हम तो गिरधर हैं फिर हमको लोग मुरलीधर क्यों कहते हैं)।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा – जो रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापत नहीं लपटे रहत भुजंग ॥३२॥

शब्दार्थ—प्रकृति=असलियत, सहज स्वभाव। भुजंग=साँप।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यदि किसी की असलियत अच्छी हो, तो उसको कुसंगति क्या कर सकती है? देखो चंदन के पेड़ में सर्प लिपटे रहते हैं तो भी वह चंदन विषैला नहीं होता।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास से पुष्ट दूसरी अवज्ञा।

दोहा – जो रहीम ओछो बढ़ै तौ तेतनो इतराय।
प्यादे से फरजी भयो टेढ़ो मेढ़ो जाय ॥३३॥

शब्दार्थ—ओछो=नीच। तेतनो=उतना ही। इतराय=अहंकार करना, शेखी दिखलाना। प्यादा, फरजी=शतरंज के मोहरे विशेष।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि नीच जितना ही बढ़ता है उतना ही अधिक वह अहंकार जताता है, देखो शतरंज का पियादा जब फरजी (वज़ीर) बन जाता है तब वह टेढ़ी, मेढ़ो चाल चलने लगता है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—जो रहीम करिबो हुतो ब्रज को यही हवाल।
तो कत हाथहिं दुख दियो गिरिधरि गिरिधरलाल ॥३४॥

शब्दार्थ—करिबो हुतो=करना था। हवाल=दशा। गिरिधरि=गोवर्द्धन पर्वत को उठाकर। रहीम=कृपालु (यह शब्द यहाँ बड़ी युक्ति से रक्खा गया है)। (विशेष) किसी गोपी का कथन उद्धव प्रति इस गरज से कि कृष्ण से कह देना।

भावार्थ—हे कृपालु कृष्ण! यदि तुम्हें ब्रज की यही दशा करनी मंजूर थी, (कि लोग मरणान्त कष्ट सहें) तो हे गिरधर-लाल, (इन्द्रकोप के समय) गोबर्द्धन पर्वत को उठाकर आपने अपने कर-कमल को क्यों कष्ट दिया था (उसी समय समस्त ब्रज को नष्ट हो जाने देते)।

अलंकार—विधि।

दोहा—जो रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो लगै बढ़े अँधेरो होय ॥३५॥

(सूचना) इस दोहे में रहीम ने बारे, उजियारो, बढ़े और अँधेरो शब्दों के दो दो अर्थों के ज़ोर से अच्छी उक्ति निकाली है।

शब्दार्थ—बारे=(१) बचपन में (२) जलाने से। उजियारो=(१) सुन्दर (२) उजेला, प्रकाश। बढ़े=(१) बड़ा होने पर (२) बुझ जाने पर। अँधेरो=(१) अँधेर, अत्याचार (२) अँधेरा।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि किसी के कुल के कपूत की और दीपक की एक सी दशा होती है अर्थात जैसे दीपक बालने से घर भर प्रकाशित और बुझाने पर घर भर अँधेरा हो ज़ाता है, वैसे ही बचपन में तो वह सुन्दर लगता है (और वंश चलने और सुयश के प्रकाशित होने की आशा जान पड़ती है) पर बड़े होने पर (कपूत होने के कारण) उससे अँधेर और अत्याचार ही के कार्य होते हैं! अथवा उसके बढ़ जाने पर (मर जाने पर) कुल अँधेरा हो जाता है अर्थात् वंश में कोई दिया बारने वाला नहीं रह जाता।

अलंकार—श्लेष।

दोहा—जो रहीम दीपक दुरै तिय राखति पट ओट ।
समै परे पै होत है वाही पट ते चोट ॥३६॥

शब्दार्थ—दुरै राखति=छिपा रखती है । समय परे पै=विपद का समय आने पर ।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि स्त्रियाँ जिस अंचल पट से दीपक को छिपा कर रखती हैं, मुसीबत का समय आने पर उसी अंचल से दीपक को बुझाती हैं ।

सूचना—इसी तात्पर्य्य का एक दोहा यह भी है:—

जेहि अंचल दीपक दुरो हन्यो सो ताही गात ।
रहिमन असमय के परे मित्र शत्रु ह्वै जात ॥

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दोहा—जो रहीम बिधि बड़ किये को कहि दूषण काढ़ि ।
चंद दूबरो कूबरो तऊ नखत ते बाढ़ि ॥३७॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि ब्रह्मा ने जिन्हें बड़ा बनाया है उनके दोष गिनाकर उन्हें बड़ों की गणना से कौन बाहर निकाल सकता है । देखो द्वितीया का चन्द्रमा यद्यपि दुर्बल और टेढ़ा होता है तथापि तारों से बढ़कर ही होता है (सब उसे नमस्कार करते हैं) ।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दोहा—जो रहीम मन हाथ है तो तन कहुँ किन जाहिं ।
ज्यों जल में छाया परे काया भीजत नाहिं ॥३८॥

शब्दार्थ—छाया=प्रतिबिंब । काया=शरीर । हाथ=काबू, अधिकार ।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि यदि मन काबू में है तो

तन चाहे जहाँ जाय (कोई हरज नहीं) जैसे किसी के शरीर का प्रतिबिंब यदि जल में पड़ता हो तो इतने ही से शरीर नहीं भीग जाता (तात्पर्य यह है कि मन को वशीभूत कर लेने से शरीर द्वारा कोई पापकर्म नहीं हो सकता)

अलंकार—उदाहरण।

(सूचना) इसी प्रकार की बीरबल की यह उक्ति है :—

दोहा—तन जावे तो जान दे दृढ़ कर मन बरबीर।
रोदे बिना कमान है कैसे लागै तीर॥

× दोहा—जो रहीम भाभी कतहुँ होति आपने हाथ।
राम न जाते हरिन सँग सीय न रावन साथ॥३९॥

शब्दार्थ—भाभी=(भावी) भविष्यत्, होनहार, होनी।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यदि होनहार पर अपना अधिकार होता तो रामजी छली हिरन के शिकार को न जाते और न रावण ही सीता को अपने साथ ले जाता (तात्पर्य यह है कि श्रीराम ऐसे ज्ञानी और रावण ऐसे बली और छली भी होन-हार को नहीं रोक सकते, जो कुछ होना होता है, वह होकर ही रहता है।

अलंकार—संभावना।

दोहा—तनु रहीम है करमबस मन राखो वहि ओर।
जल में उलटी नाव ज्यों खैंचत गुन के जोर॥४०॥

शब्दार्थ—वहि ओर=ईश्वर की ओर। गुन=रस्सी।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि शरीर तो कर्म के बशी-भूत है, (अर्थात् कर्मों के अनुसार ही चौरासी में भ्रमना पड़ेगा और शारीरिक सुख दुःख सहने पड़ेंगे) मन को ईश्वर की

ओर लगाये रखना चाहिये, जैसे ज़बरदस्ती नदी के बहाव के प्रतिकूल रस्सी के जोर से नाव को खींच ले जाते हैं।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—तब ही लग जीबो भलो दीबो परै न धीम।
बिन दीबो ज़ीबो जगत हमहिं न रुचत रहीम ॥४१॥

शब्दार्थ—जीबो=जीना। दीबो=देना, दान करना। धीम=कम।

भावार्थ—सरल और स्पष्ट ही है।

अलंकार—अनुप्रास।

दोहा—तरवर फल नहिं खात है सरवर पियत न पान।
कह रहीम पर काज हित संपति सँचहिं सुजान ॥४२॥

शब्दार्थ—तरवर=वृक्ष। सरवर=ताल। पान=पानी। सँचहिं=संचय करते हैं। इकट्ठा करते हैं, जोड़ते हैं।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि सुजान लोग केवल पराये काम के लिये संपत्ति एकत्र किया करते हैं। देखो वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते न ताल अपना पानी पीता है। (पर वृक्ष फलों को और ताल पानी को दूसरों के उपयोग के लिये संचित करते हैं)

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—तेहि प्रमाण चलिबो भलो जो सब दिन ठहराय।
उमड़ि चलै जल पार ते जो रहीम बढ़ि जाय ॥४३॥

शब्दार्थ—प्रमाण=हद, सीमा। सब दिन=सदा। ठहराय=स्थायी हो, चल सके। उमड़ि चलै=बढ़कर निकल जाता है। पार=बाँध, मेंड़।

भावार्थ—रहीम कवि कहते हैं कि अपना आचरण उसी सीमा के भीतर ही भीतर रखना चाहिये जो सर्वदा निभ सके क्योंकि जल यदि बढ़ जाता है तो बाँध (मेंड़) तोड़कर बह चलता है।

अलंकार—दृष्टान्त।

दोहा—दादुर मोर किसान मन लग्यो रहै घन माहिं।
पै रहीम चातक रटनि सरवरि को कोउ नाहिं ॥४४॥

शब्दार्थ—दादुर=मेंढ़क। घन=बादल। चातक=पपीहा। सरवरि=बराबरी।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यद्यपि मेंढ़क, मोर, और किसान का मन भी बादल की ओर लगा रहता है (ये सब बादल से प्रेम रखते हैं) परंतु पपीहा की रटना की बराबरी कोई भी नहीं कर सकता।

अलंकार—व्यतिरेक।

दोहा—दीन सबन को लखत है दीनहिं लखै न कोय।
जो रहीम दीनहिं लखै दीनबंधु सम होय ॥४५॥

शब्दार्थ—दीन=निर्धन, अनाथ। दीनबंधु=ईश्वर।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि अनाथ (निराश्रय) जन सब को देखता है, पर अनाथ को कोई नहीं देखता। जो सज्जन अनाथ को देखता है (उस पर दया करके उसे आश्रय देता है) वह ईश्वर के समान (पूज्य और आदरणीय) होता है।

अलंकार—उपमा।

दोहा—दीरघ दोहा अर्थ के आखर थोरे आहिं।
ज्यों रहीम नट कुंडली सिमिट कूदि कढ़ि जाहिं ॥४६॥

शब्दार्थ—दीरघ=बड़ा। आखर=अक्षर। कुंडी=बाँस वाला लोहे का बना हुआ वृत्ताकार चक्कर, जिस पर नट लोग खेल किया करते हैं।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि दोहा छंद में अक्षर तो थोड़े होते हैं, पर उनसे अर्थ बहुत निकलता है। उन थोड़ेही अक्षरों में से बहुत बड़ा अर्थ इस प्रकार निकल आता है जैसे नट सिमिट कर (शरीर को सिकोड़ कर) अपनी कुंडली से कूद कर निकल जाता है।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जइये भागि।
ठाढ़े हूजत घूर पर जब घर लागत आगि ॥४७॥

शब्दार्थ—दुरदिन=बुरा समय। दुरथल=बुरा स्थान।

भावार्थ—रहीम कहते हैं। कि बुरा समय पड़ने पर बुरे स्थान में भी लोग जाते हैं (अनुचित नहीं है) जैसे घर में आग लग जाती है, तब लोग घूर पर भी खड़े होते हैं और अपनी जान बचाते हैं।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—दुरदिन परे रहीम कहि भूलत सब पहिचानि।
सोच नहीं बितहानि को जो न होय हित-हानि ॥४८॥

शब्दार्थ—दुरदिन=बुरा समय। सब=सब लोग। बित=धन। हित=प्रेम।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बुरा समय पड़ने पर सब लोग जान पहचान भी भूल जाते हैं। परन्तु ऐसा होने पर भी धैर्यवान मनुष्य, धन हानि का कुछ भी सोच नहीं करता, यदि प्रेम की हानि न हो।

दोहा—धन दारा अरु सुतन में रहत लगाये चित्त ।
क्यों रहीम खोजत नहीं गाढ़े दिन को मित्त ॥४९॥

शब्दार्थ—दारा=स्त्री । गाढ़ा दिन=संकट का समय, मृत्यु का समय । मित्त=मित्र ।

भावार्थ—सरल ही है ।

दोहा—धनि रहीम गति मीन की जल बिछुरत जिय जाय ।
जियत कंज तजि अन्त बसि कहा भौंर को भाय ॥५०॥

शब्दार्थ—गति=दशा, हालत । कंज=कमल । अन्यत्र=और जगह । भाय=परवाह, निर्भरता ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि धन्य है मछली की दशा, कि जल से अलग होते ही उसके प्राण चले जाते हैं (ऐसा ही सच्चा प्रेमी धन्य है जो मित्र-विरह में प्राण त्याग दे) और एक अधम प्रेमी भौंरा है कि कमल को छोड़कर अन्यत्र बसकर भी जीता है, और उसकी कुछ भी परवाह नहीं करता (अधम है वह प्रेमी जो अपने प्रेम पात्र की परवाह न करे) ।

अलंकार—अन्योक्ति ।

दोहा—धनि रहीम जल पंक को लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बड़ाई कौन है जगत पियासो जाय ॥५१॥

शब्दार्थ—पंक=कीचड़, दलदल । लघु जिय=छोटे छोटे जीव जन्तु । उदधि=समुद्र ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि धन्य है वह कीचड़ का जल जिससे छोटे छोटे जीव जन्तु पीकर तृप्त हो जाते हैं । समुद्र की बड़ाई किस काम की है जो उसका जल न पी सकने के कारण संसार उसके तीर से पियासा ही लौट जाता है ।

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—धूर धरत नित सीसपर कहु रहीम केहि काज।
जेहि रज मुनिपतनी तरी सो ढूँढत गजराज ॥५२॥

शब्दार्थ—रज=धूल। मुनिपतनी=अहल्या (गौतम पत्नी)।

भावार्थ—(रहीम अपनी कल्पना से प्रश्न करते हैं कि) हे रहीम! बतलाओ तो कि हाथी अपने मस्तक पर धूल क्यों डाला करता है? (कल्पना उत्तर देती है कि) हाथी उस रज को ढूँढा करता है जिसके प्रसंग से गौतमपत्नी अहल्या तर गयी थी (कहीं वह धूल मेरे मस्तक पर पड़ जाय तो मैं भी तर जाऊँ)।

अलंकार—प्रश्नोत्तर।

दोहा—नहिं रहीम कछु रूप गुण नहिं मृगया अनुराग।
देसी स्वान जो राखिये फिरत भूख ही लाग ॥५३॥

शब्दार्थ—मृगया=शिकार। अनुराग=प्रेम। राखिये=पालिये। लाग=वास्ते।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि देसी कुत्तों के पालने से क्या फायदा. वे तो अपनी भूख बुझाने के लिये द्वार द्वार घूमते फिरते हैं न उनमें रूप होता है न गुण और न शिकार का शौक ही।

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—नात नेह दूरी भलो जो रहीम जिय जानि।
निकट निरादर होत है ज्यों गढ़ई को पानि ॥५४॥

शब्दार्थ—नात=रिश्ता। नेह=प्रेम। जो जिय जानि=जो चित्त से समझे। गढ़ई=छोटी तलैया। पानि=पानी।

भावार्थ—सरलही है।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—नाद रीझि तन देत मृग नर धन हेत समेत ।
ते रहिमन पशु ते अधिक रीझेहु कछू न देत ॥५५॥

शब्दार्थ—नाद=राग । हेत=प्रेम ।

भावार्थ—राग पर रीझ कर मृग अपना तन दे डालता है । (शिकार बनता है) और मनुष्य भी रीझकर प्रेम समेत धन देता है । परन्तु जो रीझने पर भी कुछ नहीं देते वे तो पशु से भी अधिक जड़ बुद्धि हैं ।

दोहा—नैन सलोने अधर मधु कहु रहीम घटि कौन ।
मीठो भावै लौन पर अरु मीठे पर लौन ॥५६॥

शब्दार्थ—सलोने=(स+लावण्य) सुन्दर, नमकीन । लौन=(लवण) नोन ।

भावार्थ—(प्रीति पात्र के) नेत्र सलोने (सुन्दर) होते हैं और ओठ मीठे होते हैं । (अत: कभी उसका कभी उसका रस लेना चाहिये—ध्यान करना चाहिये क्योंकि) नमकीन के बाद मीठा, और मीठे के बाद नमकीन (भोजन) अच्छा लगता है ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

दोहा—परि रहिबो मरिबो भलो सहिबो कठिन कलेस ।
बामन ह्वै बलि को छल्यो दियो भलो उपदेस ॥५७॥

शब्दार्थ—परि रहिबो=भूखा पड़ रहना । मरिबो=भूखों मर जाना ।

भावार्थ—भूखे पड़ रहना, भूखों मरजाना, और कठिन क्लेश सहना अच्छा है, (पर माँगना अच्छा नहीं) बामन महाराज ने बलि को छलकर यही उपदेश दिया है । तात्पर्य यह है

कि मांगने के लिये ईश्वर को भी छोटा बनना पड़ा और द्वार-पाल होकर सेवा करनी पड़ी, अतः मांगना अच्छा नहीं।

अलंकार—सदर्थ निदर्शना।

दोहा—प्रीतम छबि नैनन बसी पर छबि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि आपु पथिक फिरि जाय॥५८॥

शब्दार्थ—सराय=पथिकों के ठहरने का स्थान। पथिक=मुसाफिर।

भावार्थ—सरल ही है।

अलंकार—दृष्टान्त।

दोहा—बड़ माया को दोष यह, जो कबहूँ घटि जाय।
तो रहीम मरिबो भलो, दुख सहि जियै बलाय॥५९॥

शब्दार्थ—बड़ माया=अधिक धन। जियै बलाय=जीना न चाहिये।

भावार्थ—अधिक धनी होने में यही दोष है (कि वह धन नष्ट होने पर कष्ट होता है) अतः सिद्धान्त यह रखना चाहिये कि जब कभी धन घट जाय तब मरना ही अच्छा, दुख सहकर जीते रहना अच्छा नहीं।

(नोट) इस दोहे का संदर्भ यह है कि उदार चित्त दानी धनी की जब लक्ष्मी घट जाती है और वह चितचाही उदारता नहीं दिखला सकता, तो उसे मरणान्त कष्ट होता है। यहाँ 'दुख' शब्द का भाव है "दान न दे सकने का दुःख"।

दोहा—बड़े जो छोटेन सों बँधे रहिमन यह श्रुति लेख।
हय हज़ार को बाँधिये लै छदाम की मेख॥६०॥

शब्दार्थ—बँधे=निर्भर रहते हैं । श्रुति लेख=वेद का लेख है । हय=घोड़ा । छदाम=एक पैसे का चौथाई । मेख=खूँटा ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यह तो वेद का लेख है कि बड़ों की बड़ाई छोटों पर निर्भर रहती है (बड़े लोग छोटों के आश्रित रहते हैं) हज़ार रुपये कीमत का घोड़ा एक छदाम की मेख में बँधा रहता है । (देखो दोहा नंबर २४)

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दोहा—बड़े पेट के भरन को है रहीम दुख बाढ़ि ।
याते हाथी हहरि कै दिये दाँत दुइ काढ़ि ॥६१॥

शब्दार्थ—हहरिकै=घबराकर । दाँत काढ़ना=दीनता दरसाना ।

भावार्थ—बड़े पेट को भरने के लिये बड़ा दुःख सहना पड़ता है, रहीम कहते हैं कि इसी कारण घबराकर हाथी ने अपने दो दाँत काढ़ दिये हैं । (दाँत काढ़कर सदा दीनता दिखलाता रहता है) ।

अलंकार—निदर्शना ।

दोहा—बड़े दीन को दुख सुने लेत दया उर आनि ।
हरि हाथी सों कब हुती कहु रहीम पहिचानि ॥६२॥

शब्दार्थ—दया उर आनि लेत=दयालु हो जाते हैं । हरि=विष्णु ।

भावार्थ—बड़े लोग दीन का दुख सुनकर दयालु हो ही जाते हैं । रहीम कहते हैं कि विष्णु से हाथी की कब की जान पहचान थी (कि गज की गोहार पर दौड़ कर उसे बचाया) ।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दोहा—बढ़त रहीम धनाढ्य धन धनिही को धन जाय ।
घटै बढ़ै तिनको कहा भीख माँगि जो खाय ॥६३॥

शब्दार्थ—धनाढ्य (धन+आढ्य) धनी, दौलतमंद।

भावार्थ—रहीम कहते हैं धनी ही का धन बढ़ता है और धनी ही का धन नष्ट भी होता है। जो भीख माँग कर खाते हैं उनका क्या घटना बढ़ना है। तात्पर्य यह है कि धन के घटने की चिंता और बढ़ने का आनंद धनी ही को होता है, धनहीन जन इन दोनों से मुक्त हैं।

दोहा—बिगरी बात बनै नहीं लाख करो किन कोइ।
रहिमन बिगरे दूध को मथे न माखन होइ ॥६४॥

भावार्थ—सरल ही है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—बिरह रूप घन-तम भये अवधि-आसि उद्योत।
ज्यों रहीम भादौं निसा, चमकि जात खद्योत ॥६५॥

शब्दार्थ—घनतम=घना अंधकार। उद्योत=प्रकाश, उजेला। खद्योत=जुगुनू।

भावार्थ—प्रेमी का विरह जब घने अन्धकार के रूप में होकर घेर लेता है, तब मिलन के वादे की आशा प्रकाश का काम देती है, जैसे भादों की रात में जुगनू चमककर कुछ प्रकाश कर जाती है।

अलंकार—रूपक और उदाहरण।

दोहा—मथत मथत माखन रहै दही मही बिलगाय।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराय ॥६६॥

शब्दार्थ—विलगाय रहे=अलग हो जाता है। भीर=बिपत्ति। ठहराय-साथ रहै। मही-माठा, छांछ।

भावार्थ—मथते मथते माखन दही माठा से अलग हो जाता

है, इस से जान पड़ता है कि माखन दही मही का सच्चा मित्र नहीं है क्योंकि सच्चा मित्र वही है जो विपत्ति पड़े पर साथ रहे।

दोहा—मांगे घटत रहीम पद कितो करो बढ़ि काम।
तीन पैग बसुधा करी तऊ बावनै नाम ॥६७॥

शब्दार्थ—पैग=डग, काल, कदम। बसुधा-पृथ्वी।

भावार्थ-सरल ही है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—मानसरोवर ही मिलै हंसनि मुकुता भोग।
सफरिन भरे रहीम सर बक बालकहिन जोग ॥६८॥

शब्दार्थ—सफरी=मछली।

भावार्थ—मान सरोवर ही में हंसों को मोतियों का भोजन मिल सकता है (अन्यत्र नहीं) रहीम कहते हैं कि मछलियों से भरे तालाब तो बगलों के बच्चों ही के योग्य होते हैं।

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—मान सहित विष खाय कै शंभु भये जगदीश।
बिन आदर अमृत चख्यो राहु कटायो शीश ॥६९॥

भावार्थ—सरल है।

अलंकार—निदर्शना।

दोहा—मुक्ताकर कर्पूरकर चातक जीवन जोय।
एतो बड़ो रहीम जल ब्याल बदन बिष होय ॥७०॥

शब्दार्थ—मुक्ताकर=जिससे मोती पैदा होती है। कर्पूरकर=जिससे कपूर पैदा होता है। जीवन=जिन्दगी। ब्याल=सर्प। बदन=मुख।

भावार्थ—जो जल मोती और कपूर पैदा करता है और पपीहे का तो जीवन ही है। इतना बड़ा होने पर भी जब वह सर्प के मुखमें पड़ता है, तब विष ही हो जाता है।

अलंकार—उल्लास।

दोहा—यद्यपि अवनि अनेक हैं तोयवंत सर ताल।
रहिमन एकै मानसर मनसा करत मराल ॥७१॥

शब्दार्थ—अवनि=पृथ्वी। तोयवंत=पानी से भरे पूरे। मनसा करत=मन से चाहता है। मराल=हंस।

भावार्थ—यद्यपि पृथ्वी पर जल से परिपूर्ण अनेक छोटे बड़े जलाशय हैं, पर रहीम कहते हैं कि हंस एकमात्र मानसरोवर ही को चाहता है।

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—यह न रहीम सराहिये लेन देन की प्रीति।
प्रानन बाजी राखिये हार होय कै जीति ॥७२॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि लेन देन की प्रीति प्रशंसा याग्य नहीं। प्रीति वही प्रशंसनीय है जो प्राणों की बाजी लगा कर की जाय (मित्र के उपकार के लिये प्राण तक देने को तैयार रहे) चाहे हार हो चाहे जीत (प्राण चाहे जायें चाहे बच जायें)

अलंकार—विकल्प।

दोहा—याते जान्यों मन भयो जरि बरि भसम बनाय।
रहिमन जाहि लगाइये सोइ रूखो ह्वै जाय ॥७३॥

भावार्थ—मैंने इसी से जान लिया कि मेरा मन जल भुन कर बिल्कुल राख हो गया है क्योंकि मैं उसे जिससे लगाता हूँ वही रूखा हो जाता है।

अलंकार—काव्यलिंग।

दोहा—ये रहीम निज संग लै जनमत जगत न कोय।
बैर प्रीति अभ्यास यश होत होत ही होय ॥७४॥

मावार्थ—रहीम कहते हैं कि ये चार चीजें कोई साथ लेकर नहीं जनमता। बैर, प्रेम, अभ्यास और यश ये चारो धीरे धीरे प्राप्त होते हैं।

अलंकार – तुल्ययोगिता (प्रथम)।

दोहा—यों रहीम गति बड़ेन की ज्यों तुरंग व्यवहार।
दाग दिवावत आपु तन सही होत असवार ॥७५॥

शब्दार्थ—गति=बानि, आदत। तुरंग=घोड़ा। व्यवहार बर्ताव।

(नोट) मुगल सेना में दस्तूर था कि सवार खास अपना घोड़ा रखता था। जब वह नौकर होता था तब उसका घोड़ा दाग दिया जाता था। बिना घोड़े के दागे सवार की नियुक्ति पक्की नहीं समझी जाती थी।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़ों का स्वभाव वैसा ही होता है जैसा घोड़े का बर्ताव। घोड़ा अपने तन पर दाग दिलवाता है और चाकरी पर नियुक्ति होती है सवार की। अर्थात बड़े लोग दूसरों की जीविका के वास्ते स्वयं कष्ट उठाते हैं।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—यों रहीम सुख दुख सहत बड़े लोग सह साँति।
उवत चंद जेहि भाँति सों अथवत वाही भांति ॥७६॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े लोग इस प्रकार शान्ति पूर्वक सुख और दुख को भोग करते हैं जैसे चंद्रमा जिस शान्ति से उदय होता है, उसी शान्ति से अस्त हो जाता है।

अलंकार—उदाहरण, और यथासंख्य भी ।

दोहा—यों रहीम सुख होत है बढ़त देखि निज गोत ।
ज्यों बड़री अँखियाँ निरखि अँखियन को सुख होत ॥७७

शब्दार्थ—गोत=बिरादरी । बड़री=बड़ी ।

भावार्थ—अपने गोत्र वाले को बढ़ते देखकर लोगों को इस प्रकार सुख होता है जैसे बड़ी बड़ी आँखें देखकर आँखों को सुख होता है ।

अलंकार—उदाहरण ।

दोहा—रहिमन अँसुवा नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेइ ।
जाहि निकासो गेह तें कस न भेद कहि देइ ॥७८॥

शब्दार्थ—करेइ=करता ही है । गेह=घर ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि आँसू नेत्रों से ढलकर हृदय की पीड़ा को ही प्रगट करते हैं । सो ठीक ही है, जिसको घर से निकालोगे वह घर का गुप्त भेद क्यों न प्रगट कर देगा (अवश्य प्रगट कर देगा—कर ही देना चाहिये) ।

अलंकार—सम ।

दोहा—रहिमन अति न कीजिये गहि रहिये निज कानि ।
सहिंजन अति फूलै तबै डार पात की हानि ॥७९॥

शब्दार्थ—अति=ज्यादती । कानि=मर्यादा । सहिंजन=वृक्ष विशेष ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि किसी काम में अति न करो अपनी मर्यादा में रही हो । क्योंकि जब सहँजना अधिक फूलता है, तभी उसकी डालैं काट दी जाती हैं ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

दोहा—रहिमन अपने पेट सों बहुत कह्यौ समझाय ।
जो तू अनखायो रहै का कोऊ अनखाय ॥८०॥

शब्दार्थ—अनखायो=बिना खाये । अनखाय=अप्रसन्न हो, अनख माने ।

भावार्थ—सरल ही है ।

दोहा—रहिमन अब वे बिरिछ कहँ जिनकी छांह गँभीर ।
बागन बिच बिच देखियत सेंहुड़, कंज, करीर ॥८१॥

शब्दार्थ—बिरिछ=वृक्ष । गँभीर=घनी । सेहुँड़ (सं० स्नुही) थूहड़ ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि अब वे वृक्ष कहाँ हैं जिनकी छाहँ घनी होती थी (सब लोग उनसे आराम पाते थे) । अब तो सब बागों में थूहड़ कंजा और करील ही दिखलाई देते हैं ।

अलंकार—अन्योक्ति ।

दोहा—रमिहमन आलस भजन में विषय सुखहिं लपटाय ।
घास चरै पशु स्वाद तें गुरु गुलियाये खाय ॥८२॥

शब्दार्थ—गुरु=गुड़ । गुलियाना=अँगूठे के बल जबरई मुख में ठेलना ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि मनुष्य राम भजन करने में तो आलस्य करता है और विषय सुखों में खुशी से लिपटा रहता है । यह ठीक वैसी ही बात है जैसे पशु घास तो खुशी से चरता है, परन्तु गुड़ को जबरदस्ती मुख में ठेलने से कठिनता से खाता है ।

अलंकार—दृष्टान्त ।

दोहा—रहिमन ओछे प्रसंग तें नित प्रति लाभ विकार।
नीर चुरावै संपुटी मार सहै घरियार ॥८३॥

शब्दार्थ—ओछे=(सं० तुच्छ, प्रा० उच्छ) तुच्छ, नीच। प्रसंग=साथ। विकार=हानि। संपुटी=ककटोरी (जलघड़ी की) घरियार=घंटा।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि नीचजनों की संगति से नित्य ही हानि सहनी पड़ती है, (देखिये) पानी तो चोराती है (जलघड़ी की) कटोरी, पर मार सहनी पड़ती है घंटे को।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—रहिमन कबहुँ बड़ेन के नाहिं गर्व को लेश।
भार धरे संसार को तऊ कहावत शेष ॥८४॥

शब्दार्थ—लेश=रंच मात्र। शेष=शेषनाग। शेष का दूसरा अर्थ है "कुछ नहीं"।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़े लोगों को (अपनी कृत्य का) रंचमात्र भी घमंड नहीं होता। (देखो) तमाम पृथ्वी का भार अपने सिर पर लिये हुए हैं, तो भी लोग उन्हें शेष (कुछ नहीं) ही कहते हैं (तब भी वे नाराज़ नहीं होते)।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—रहिमन कहत स्वपेट सों क्यों न भयो तू पीठ।
रीते अनरीतैं करै भरे बिगारै डीठ ॥८५॥

शब्दार्थ—स्वपेट=अपना पेट। रीते (सं० रिक्त) खाली। अनरीत=अन्याय। डीठ बिगाड़ना=विषय की ओर दृष्टिपात करना।

भावार्थ—रहीम अपने पेट से कहते हैं कि रे पेट ! तू पीठ

क्यों न हुआ ? (तू पीठ होता तो अच्छा होता – तू बोझा ढोता और कसूर करने पर पीटा जाता) क्योंकि तू पेट होकर ऐसी दुष्टता करता है कि जब खाली पेट रहता है तब तो चोरी बेई-मानी करवाता है, और जब भरा रहता है (खाने को अच्छी तरह मिलता है) तब दृष्टि को बिगाड़ देता है– व्यभिचार वा अहंकार की ओर झुकाता है।

दोहा—रहिमन खोजो ऊख में जहाँ सुरस की खानि।
जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं यही प्रीति की बानि ॥८६॥

शब्दार्थ—गाँठ=गिरह (२) कपट। बानि=स्वभाव, आदत।

भावार्थ—सरल ही है।

दोहा—रहिमन खोटी बानि को सोइ परिणाम लखाय।
ज्यों दीपक तम को भखै कज्जल बमन कराय ॥८७॥

शब्दार्थ—बानि=आदत। परिणाम=अन्तिम फल। तम=अन्धकार। बमन करना=बगलना।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बुरी आदत का नतीजा भी वैसा ही बुरा दिखाई देता है। जैसे दीपक अन्धकार को खाता है तो काजल ही उगलता भी है।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—रहिमन जाँचकता गहे बड़े छोट ह्वै जात।
नारायण हू को भयो बावन आँगुर गात ॥८८॥

शब्दार्थ—जाँचकता=भिखमंगापन। गात=शरीर।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि भिखमंगापन की आदत ग्रहण करने से बड़े लोग भी छोटे हो जाते हैं, (देखो) लक्ष्मी पति नारा-

यण को भी (जब वे राजा बली से मांगने गये थे) बावन आंगुर का शरीर धारण करना पड़ा था ।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दो०—रहिमन चुपके ह्वै रहो देखि दिनन को फेर ।
जबहीं अइहै सुभ घरी बनत न लगिहै देर ॥८६॥

शब्दार्थ—दिनन को फेर=ज़माने का उलट पुलट । सुभघरी= अच्छे दिन ।

भावार्थ—सरल ही है ।

दो०—रहिमन दानि दरिद्रतर तऊ जाँचिबे जोग ।
ज्यों सरितन सूखा परे कुँआ खनावत लोग ॥६०॥

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि दानी पुरुष यदि अधिक दरिद्री भी हो जाय तो भी वह जाँचने योग्य है । जैसे जब नदियाँ सूख जाती हैं, तब लोग कुवाँ ही खोद लेते हैं (तो पृथ्वी उन्हें पानी देती ही है) ।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दो०—रहिमन देखि बड़ेन को लघु न दीजिये डारि ।
जहाँ काम आवै सुई कहा करै तरवारि ॥६१॥

शब्दार्थ—डारि न दीजिये=फेंक न दो, निरादर न करो ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि बड़ों को देखकर (बड़े सेवकों को पाकर) छोटों को फेंक न देना चाहिये । जहाँ सुई का काम पड़ेगा वहाँ तलवार क्या काम कर सकैगी ।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास ।

दो०—रहिमन धागा प्रेम को मति तोरो चटकाय ।
टूटे तें फिरि ना जुरै, जुरे गाँठि परिजाय ॥६२॥

शब्दार्थ—धागा=डोरा। चटकाय=जोर लगा कर। (जिसके टूटने में कुछ शब्द हो)।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि प्रेम का संबंध इतना ज़ोर लगा कर मत तोड़ो जिसमें शोर हो (अर्थात यदि किसी से प्रेम संबंध छोंड़ना ही हो तो लड़ झगड़ कर मत छोड़ो) क्योंकि टूटने पर फिर नहीं जुड़ेगा और जुड़ेगा तो गाँठ पड़ जायेगी (फिर प्रेम संबंध न हो सकेगा, यदि होगा भी तो समता न रहेगी-विषमता आ जायगी)।

अलंकार—रूपक।

दो०—रहिमन निज मन की ब्यथा मनही राखो गोय।
सुनि अठिलैहैं लोग सब बाँटि न लैहै कोय ॥६३॥

शब्दार्थ—गोय राखो=छिपा रखो। अटिलैहैं=हंसेंगे। बाट लेना=सहाय कहना।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि अपने मन का दुःख मन ही में छिपा रखना चाहिये (किसी से न कहो क्योंकि) सुनकर लोग हँसेंगे कोई सहायक न होगा (सहानुभूति न करेगा)।

दो०—रहिमन नीचन संग बसि लगत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि मद समझैं सब ताहि ॥६४

शब्दार्थ—कलारिन=कलवार जाति की स्त्री। मद=शराब।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि नीचों के संग में रहने से किसे कलंक नहीं लगता, [सबको लगता है] देखो कलवारिन चाहे दूध ही लिये हो पर सब उसे शराब ही समझेंगे।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दो०—रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून ।
पानी गये न ऊबरैं मोती मानुष चून ॥९५॥

शब्दार्थ—पानी=[१] प्रतिष्ठा [२] जल। ऊबरैं=बचते हैं, ठीक रहते हैं ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि सबको अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करनी चाहिये क्योंकि बितिष्ठा के सब [सुख] नहीं के बराबर है। देखो पानी नष्ट होने से मोती, मनुष्य और चूना नहीं बचते [नष्ट हो जाते हैं]

अलंकार—दीपक ।

दो०—रहिमन पैंड़ा प्रेम को निपट सिलसिली गैल ।
बिछलत पाँव पिपीलिको लोग लदावत बैल ॥९६॥

शब्दार्थ—पैंड़ा=रास्ता । निपट=अत्यन्त । सिलसिली=चिकनी, बिछलौंहीं । पिपीलिका=चींटी ।

भावार्थ—रहीम कहते है कि प्रेम का मार्ग एक बड़ी ही बिछलौंहीं गली है। वहाँ चींटी का पैर भी बिछलता है अर्थात् बड़ी सावधानी रखने पर भी पतन की संभावना रहती है) पर लोग ऐसे मूर्ख हैं कि उसी मार्ग पर बैल लाद कर ले जाना चाहते हैं (बड़े आडंबर के साथ प्रीति का निर्वाह करना चाहते हैं-जो निपट असंभव है) ।

अलंकार—ललित ।

दोहा—रहिमन प्रीति सराहिये मिले होत रँग दून ।
ज्यों हरदी जरदी तजै तजै सपेदी चून ॥९७॥

शब्दार्थ—सराहिये=(सं० श्लाघ्य) प्रशंसा योग्य है। दून=दूना । जरदी=पीलापन । सपेदी=श्वेतता । चून=चूना ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि प्रीति वही प्रशंसा योग्य है जिसमें दूना चटकीला रंग हो जाय। जैसे हरदो और चूना मिलाने से (रोचना बनने पर) हल्दी अपना पीलापन और चूना अपनी सफेदी छोड़ कर एक दूसरा ही चटकीला रंग धारण करते हैं।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—रहिमन बात अगम्य की कहौ कहै को ताहि।
जो जानत सो कहत नहिं कहत सो जानत नाहिं॥९८॥

शब्दार्थ—अगम्य=निर्गुण ब्रह्म।

भावार्थ—सरल ही है।

दोहा—रहिमन विपदा हू भली जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में जानि परैं सब कोय॥९९

शब्दार्थ—बिपदा=मुसीबत। हित=मित्र। अनहित=शत्रु। जानि परै परख हो जाती है।

भावार्थ—सरल ही है।

अलंकार—अनुज्ञा।

दोहा—रहिमन मनहिं लगाय कै देखि लेहु किन कोय।
नर को बसि करिबो कहा नारायन बसि होय॥१००॥

शब्दार्थ—मन लगाना=प्रेम करना। किन=क्यों।

भावार्थ—सरल ही है।

दोहा—रहिमन यहि संसार में सब दुख मिलत अनोट।
जैसे फूटे नरद के परत दुहुन सिर चोट॥१०१॥

शब्दार्थ—अनोट (अन+ओट) बिना आड़। नरद=चौपड़ की गोट।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि संसार में आड़ रहित होने पर ही सब प्रकार के दुःख मिलते हैं जैसे जुग फूटने पर ही दोनों गोटों के शिर पर चोट की जा सकती है ।

(नोट) चौपड़ के खेल में यह नियम होता है कि बँधे जुग की गोट नहीं मारी जा सकती ।

अलंकार—उदाहरण ।

दोहा—रहिमन रहिला की भली जो परसै मन लाय ।
परसत मन मैला करै वा मैदा बहि जाय ॥१०२॥

शब्दार्थ—रहिला=चना । रहिला की=चने की रोटी । मनलाय परसै=प्रेम से खिलावै । मन मैला करना=निरादर वा घृणा सूचित करना । मैदा=गेहूं का बारीक आटा । बहिजाय=नष्ट हो जाय ।

भावार्थ—सरल ही है ।

दोहा—रहिमन राज सराहिये ससिसम सुखद जो होय ।
कहा बापुरो भानु जो तप्यौ तरैयन खोय ॥१०३॥

शब्दार्थ—राज=राजा । शशि=चंद्रमा । भानु=सूर्य ।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि वही राजा सराहने योग्य है जो चंद्र समान सब को सुखदायक हो । निकम्मे सूर्य की क्या प्रशंसा जो तारागण (आश्रित जनों) की ज्योति को मंद करके तपता है ।

अलंकार—उपमा ।

दोहा—रहिमन रिस सहि तजत नहिं बड़े प्रीति की पौरि ।
मूकन मारत आवई नींद बिचारी दौरि ॥१०४॥

शब्दार्थ—प्रीति की पौरि=प्रेमी का दरवाज़ा । मूका=घूंसा ।

भावार्थ—रहीमन कहते हैं कि बड़े लोग रिस सहकर भी प्रेमी का द्वार नहीं छोड़ते। देखो निद्रा बेचारी घूँसों मारने पर भी दौड़ी आती है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—रहिमन लाख भलो करो अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हू साँप सहज धरि खाय ॥१०५

शब्दार्थ—अगुनी=अवगुणी, दुष्ट। अगुन=अवगुण, बुराई, दुष्टता।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि लाख तरह से भलाई करो पर दुष्ट जनों की दुष्टता नहीं जाती, देखो गान सुनते और दूध पीते भी (राग सुनानेवाले और दूध पिलानेवाले को) सर्प स्वभाव ही से काट खाता है।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—रहिमन वे नर मरि चुके जे कहुँ माँगन जाहिं।
उनते पहिले वे मुए जिन मुख निकसत 'नाहिं' ॥१०६॥

शब्दार्थ—मुए=मरे। नाहिं=इनकार।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि वे मनुष्य मर चुके जो कहीं माँगने जाते हैं (अर्थात मांगना और मरना एक ही है) पुनः उन माँगने वालों से पहले ही उन्हें मुर्दा जानों जो मुख से (बस्तु होते हुए भी) कहते हैं कि नहीं है।

अलंकार—निदर्शना।

दोहा—रहिमन सूधी चाल तें प्यादो होत उजीर।
फरजी साह न है सकै टेढ़े की तासीर ॥१०७॥

शब्दार्थ—उजीर=(वज़ीर) शतरंज का मोहरा जिसे फरज़ी कहते हैं। फरजी=मंत्री। साह=बादशाह। तासीर=प्रभाव।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि (शतरंज में) अपनी सीधी चाल से पियादा भी वज़ीर बन जाता है, पर अपनी टेढ़ी चाल के प्रभाव से फरज़ी (मोहरा) बादशाह नहीं हो सकता।

दोहा—रीति प्रीति सबसों भली बैर न हित मित गोत।
रहिमन याही जनम की बहुरि न संगति होत ॥१०८॥

शब्दार्थ—हित=रिश्तेदार। मित=मित्र। गोत=बिरादरी के लोग।

भावार्थ—रहीम का कथन है कि रिश्तेमंद, मित्र और बिरादरी सब से बराबर प्रेम का व्यवहार रखना ही अच्छी बात है, बैर रखना अच्छा नहीं, क्योंकि इसी जीवन भर साथ है, फिर तो कभी भेंट न होगी।

अलंकार— काव्यलिंग।

दोहा—रूप, कथा, पद, चारु, पट कंचन, दोहा, लाल।
ज्यों ज्यों निरखत अलप त्यों मोल रहीम बिसाल॥१०९

शब्दार्थ—कथा=राम कथा। चारु=केसर के किंजल्क। पद—सूर, तुलसी, कबीर इत्यादि महात्माओं के बनाये पद (गाने के)। लाल=पुत्र। अलप=बारीक वा सूक्ष्म गठन के। मोल=सम्मान।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि रूप, कथा (राम कथा), पद (महात्माओं के कहे) केसर (किंजल्क), बस्त्र (महीन), सोना (बारीक वरक़ या तार) दोहा और पुत्र ये सब बस्तुएँ देखने में जितनी ही छोटी (सूक्ष्म, बारीक, वा छोटी) होंगी उतना ही अधिक उनका सम्मान होगा।

अलंकार—दीपक।

दोहा—संतति संपति देखिकै सब कोउ सब कहँ देइ।
दीनबंधु बिनु दीन की को रहीम सुधि लेइ ॥११०॥

शब्दार्थ—सन्तति=औलाद। संपति=धन।

भावार्थ—औलाद और धन देखकर सब मनुष्य सब मनुष्यों को ऋण वा दान देते हैं, पर रहीम कहते हैं कि सिवाय दीन बन्धु ईश्वर के दीन जन की कौन सुध लेता है (कोई कुछ नहीं देता)।

[नोट]—आगे दो० नं० ११३ भी ठीक इसी भाव का है।

दोहा—सब कोऊ सब सों करै राम जोहार सलाम।
हित रहीम तब जानिये जा दिन अटकै काम ॥१११॥

शब्दार्थ—राम जोहार=दंड प्रमाण। सलाम=उचित अभिवादन। हित=प्रेम।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यों तो सभी लोग सब को दंड प्रणाम वा प्रेमाभिवादन किया ही करते हैं, पर सच्चा प्रेम तो जाना जाय जब काम अटकने पर कोई काम आवै (संकट के समय काम आवै)।

दोहा—सबै कहावैं लसकरी सब लसकर कहँ जायँ।
सेल सड़ाके जे सहैं तेइ जागीरें खायँ ॥११२॥

शब्दार्थ—लसकरी-[फा०] सिपाही। लसकर=सेना। सेल सड़ाके=साँग के घाय। जागीर=वह ज़मीन जो राजा की ओर से किसी को माफ़ी में मिलती है।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि यों तो सभी लोग सिपाही

कहलाते हैं और सब सेना में शरीक होकर लड़ाई पर जाते हैं, पर जागीरें उन्हीं को मिलती हैं जो साँग के घाव सहते है

अलंकार—निदर्शना।

दोहा—समय दसा कुल देखि कै लोग करत सनमान।
रहिमन दीन अनाथ को तुम बिन को भगवान॥१

शब्दार्थ—समय=मौका। दसा=वर्तमान परिस्थिति। कु खानदान।

भावार्थ—सरल ही है।

नोट—[देखो] दोहा न० ११०।

दोहा—सरवर के खग एक से बाढ़त प्रीति न धीम।
पै मराल को मानसर एकै ठौर रहीम॥११४

शब्दार्थ—सरवर=ताल। खग=पक्षी। धीम=कम मराल=हंस।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि ताल की समझ में तो स पक्षी एक से हैं (बराबर हैं) वह किसी से न तो अधिक प्री रखता है और न कम (क्योंकि सब पक्षी भी वैसा ही व्य हार करते हैं) पर हंस के लिए तो केवल एक मानसर आधारभूत है (वह मानसर छोड़कर अन्यत्र नहीं जाता, अ मानसर को भी चाहिये कि हंस का यथार्थ आदर औ सतकार करै)

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—सर सूखे पंछी उड़ैं औरै सरन समायँ।
दीन मीन बिन पंख के कहु रहीम कहँ जायँ॥११

भावार्थ—एक ताल सूख जाने पर वहाँ के पक्षी उड़

चले जाते हैं और अन्यन्य तालों में जाकर अपना निर्वाह करते हैं, पर रहीम कहते हैं कि बेचारी पंखरहित मछलियाँ कहाँ जा सकती हैं (कहीं नहीं)।

अलंकार--अन्योक्ति।

दोहा—ससि की सीतल चाँदनी सुन्दर सबहिं सोहाय।
लगै चोर चित को लटी घटि रहीम मन आय॥११६॥

शब्दार्थ—ससि=चन्द्रमा। लटी=बुरी। मन=नीयत। आय=सं० (अस्ति) है।

भावार्थ—चन्द्रमा की सुन्दर और शीतल चाँदनी सब को अच्छी लगती है, पर चोर को बुरी लगती है, क्योंकि उसकी नीयत ख़राब होती है (इसी प्रकार बदनीयत आदमी को अच्छे आदमी बुरे जान पड़ते हैं)।

अलंकार—अर्थान्तरन्यास।

दोहा—ससि, सकोच, साहस, सलिल, मान, सनेह, रहीम।
बढ़त बढ़त बढ़ि जात हैं, घटत घटत घट सीम॥११७॥

शब्दार्थ—ससि–चन्द्रमा। सलिल–पानी। सीम–सीमा, हद्द।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि चन्द्रमा, लज्जा, हिम्मत पानी, आदर और प्रेम की सीमा धीरे धीरे बढ़ती है और धीरे ही धीरे घटती भी है।

अलंकार—दीपक।

दोहा—सीत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहिं चूक।
रहिमन तेहि रबि को कहा जो घटि लखै उलूक॥११८

शब्दार्थ—सीत=सरदी। तम–अन्धकार। भुवनभरत=सारे संसार का पालन करता है। चूक=गलती, कमी। रवि=सूर्य। उलूक=उल्लू पक्षी।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि जो सरदी और अन्धकार क
हरता है और नित्य प्रति समस्त संसार के भरन पोषण
गलती नहीं करता, उस सूर्य को यदि उल्लू अच्छा नहीं सम
झता तो सूर्य का क्या बिगड़ जाता है (कुछ नहीं)

अलंकार—अन्योक्ति।

दोहा—हरि रहीम ऐसी करी ज्यों कमान सर पूर।
खैंचि आपनी ओर को डारि दियो पुनि दूर॥११

शब्दार्थ—कमान=धनुष। लक्षण से इसका अर्थ होगा
'धनुर्धर'। पूर=ठीक। सर=तीर।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि ईश्वर ने मेरे साथ ठीक वैसा
ही किया जैसा कोई धनुषधारी तीर के साथ करता है। कि
पहले तो अपनी ओर को खींचता है और फिर दूर फेंक देता है।

अलंकार—उदाहरण।

दोहा—होय न जाकी छाहँ ढिग फल रहीम अति दूर।
बाढ़ेहु सो बिन काज ही जैसे तार खजूर॥१२०॥

शब्दार्थ—बाढ़ेहु=बड़े होने पर भी। बिना काज=व्यर्थ,
निकाम। तार=ताड़वृक्ष।

भावार्थ—रहीम कहते हैं कि जिसकी छाया (मूल के)
निकट हो और जिसका (जिसकी सेवा का) फल अति दूर
हो वह बड़ा होने पर व्यर्थ ही है जैसे ताड़ और खजूर के वृक्ष।

अलंकार—उदाहरण।

इति